भारी–बोझे, अमित-भय के, भीरुता ढोरहीथी।
बोलो भाई, तब न किस की, सभ्यता सोरहीथी ॥ १ ॥

मेधा–देवी, विकल जब थी, भारती रोरहीथी।
गोरक्षा को, बधिक बल की, क्रूरता खोरहीथी ॥
कंगाली के, मलिन-मुख को, श्री नहीं धोरहीथी।
बोलो भाई, तब न किस की, सभ्यता सोरहीथी ॥ २ ॥

आर्त्त-नाद ३

(दोहा)

डूबे शोक-समुद्र में, भारत के सुख-भोग।
हा! निष्ठुर-दुर्दैव ने, लूट लिये हमलोग ॥ १ ॥

देश-भक्तों का बिलाप ४

(सुन्दरी-सवैया)

हम दीन दरिद्र-हुताशन में, दिन रात पड़े दहते रहते हैं।
बिन मेल विरोध-महा-नद में, मन बोहित से बहते रहते हैं ॥
कविशंकर! काल-कुशासन की, फटकार-कड़ी सहते रहते हैं।
पर भारत के गत–गौरव की, अनुभूत-कथा कहते रहते हैं ॥ १ ॥

शोक-संवाद ५

(दोहा)

ऊँची पदवी से गिरा, गौरव रहा न सङ्ग।
प्यारे भारतवर्ष का, हाय! हुआ रस भङ्ग ॥ १ ॥

सम्मुखोद्गार ६

(त्रोटकात्मक-मिलिन्दपाद)

प्रभु शङ्कर! तू यदि शङ्कर है। फिर क्यों बिपरीत भयङ्कर है ॥
करतार–उदार सुधार इसे। कर प्यार निहार न मार इसे ॥

मृगराज कहाय कुरङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ २ ॥

धरणीश, धनेश, जनेश रहा । अनुकूल सदा अखिलेश रहा ॥
सब से बढ़िया, घटिया कब था । इस भांति बड़ा जब था तब था ॥
अब तो यह नङ्गमनङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ २ ॥

जिस ने सुविचार विकाश किया । रच ग्रन्थ-समूह प्रकाश किया ॥
कवि-नायक, पण्डित-राज बना । वह अज्ञ, अशिक्षित आज बना ॥
बिन पक्ष विवेक-विहङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ ३ ॥

अबलों न कहीं वह देश मिला । इस का न जिसे उपदेश मिला ॥
उस गौरव के गुण अस्त हुये । गुरु के गुरु शिष्य समस्त हुये ॥
कितना प्रतिकूल प्रसङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ ४ ॥

जिस के जन-रक्षक शस्त्र रहे । उस के कर हाय! निरस्त्र रहे ॥
रण-जीत शरासन टूट गया । इषु-वर्ग-यशोधर छूट गया ॥
रिपु-रक्त-निमग्न निषङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ ५ ॥

बिगड़ी गति वैदिक-धर्म बिना । सुख-हीन हुआ शुभ-कर्म बिना ॥
हठ ने जड़धी अविकाश किया । फिर आलस ने बल नाश किया ॥
हरिचन्दन हाय! पतङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ ६ ॥

मिल मोह-महा-तम छाय रहा । लग लोभ कुचाल चलाय रहा ॥
मद-मन्द कुदृश्य दिखाय रहा । कटुभाषण क्रोध सिखाय रहा ॥

नय-नाशक नीच अनङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥७॥

घनघोर-अमंगल गाज रहा । भरपूर विरोध विराज रहा ॥
घर घेर दरिद्र दहाड़ रहा । उर शोक-महासुर फाड़ रहा ॥
रिपु-रूप कराल-कुसङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥८॥

मद पान करे न तजे पल को । अपनाय रहा खल-मण्डल को ॥
पग पूज कलङ्क-बिभीषण के । अनुराग-रँगे गणिका-गण के ॥
दृग-दीपक देख पतङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥९॥

कुल-भाषण को अनखाय सुने । पर-शब्द-समूह सुनाय सुने ॥
जिन को गुरु मान मनाय रहा । उन की धज आप बनाय रहा ॥
पर श्यामल से न सुरङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥१०॥

अनरीति कटा कट काट रही । पशु-पद्धति शोणित चाट रही ॥
पल खाय अपव्यय खेल रहा । ऋण-बूचड़ खाल उचेल रहा ॥
ससके सब घायल अङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥११॥

बिन शक्ति समृद्धि-सुधा न रही । अधिकार गया बसुधा न रही ॥
बल साहस हीन हताश हुआ । कुछ भी न रहा सब नाश हुआ ॥
रजनीश प्रताप-पतङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥१२॥

चिर सञ्चित वैभव नष्ट हुआ । उर-दाहक-दारुण-कष्ट हुआ ॥
सुख बास न भोग-बिलास नहीं । उपबास करे धन पास नहीं ॥

बिगड़ा सब ढङ्ग कुढङ्ग हुआ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ १३ ॥

सब ठौर बड़े व्यवहार नहीं। फिर शिल्प-कला पर प्यार नहीं ॥
कुछ दीन किसान कमाय रहे। हलका हलका फल पाय रहे ॥
उन को कर—भार भुजङ्ग हुआ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ १४ ॥

कस पेट अकिञ्चन सोय रहे। बिन भोजन बालक रोय रहे ॥
चिथेड़ तक भी न रहे तन पै। धिक धूलि पड़े इस जीवन पै ॥
अवलोक अमङ्गल ढङ्ग हुआ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ १५ ॥

मत-भेद भयानक-पाप रहा। बिन प्रेम न मेल-मिलाप रहा ॥
अभिमान अधोमुख ठेल रहा। अधमाधम ढोंग ढकेल रहा ॥
सुख-जीवन का मग तङ्ग हुआ॥
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ १६ ॥

मत,पन्थ असंख्य असार बने। गुरु लोलुप,लबठ,लबार बने ॥
शठ सिद्ध कुधी कवि-राज बने। अनमेल अनेक समाज बने ॥
इस हुल्लड़ का हुरदङ्ग हुआ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ १७ ॥

सरके विधि! वेद रसातल को। सिर धार अनर्थ-महाचल को ॥
अब दर्शन--रूप न दर्शन हैं। नव—तंत्र प्रमाद--निदर्शन हैं ॥
बकवाद विचित्र-षडङ्ग हुआ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ १८ ॥

अब सिद्धमनोरथ-सिद्ध नहीं। मुनि-मुक्त-प्रवीण-प्रसिद्ध नहीं ॥
अविकल्प अनुष्ठित-योग नहीं। विधि-मूलक-मंत्र—प्रयोग नहीं ॥

फल संयम का शश-शृङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ १६ ॥
अवधेश-धनुर्धर-राम नहीं । ब्रज-नायक-श्री घनश्याम नहीं ॥
अब कौन पुकार सुने इस की । परमाकुल गैल गहै किस की ॥
तड़पै मृग-तोय-तरङ्ग हुआ ।
बस भारत का रस भङ्ग हुआ ॥ २० ॥

हमारा अधःपतन ७

(दोहा)

शङ्कर से न्यारे रहैं, वैदिक-धर्म विसार ।
होड़ी होड़ा हम गिरे, पाप प्रमाद पसार ॥१॥

(कलाधरात्मक-मिलिन्दपाद)

प्रभु-शङ्कर मोह-शोक हारी । यम-रुद्र त्रिशूल-शक्ति धारी ॥
टुक देख ! दयालु,न्यायकारी । गत-गौरव दुर्दशा हमारी ॥
उपताप समीप आरहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥१॥
जिस को सब देश जानते थे । अपना सिरमौर मानते थे ॥
जिस ने जग जीत मान पाया । अगुआ नव-खण्ड का कहाया ॥
उस भारत को लजा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥२॥
पहला युग पुण्य-कर्म का था । सुविचार प्रचार धर्म का था ॥
जिस के यश की प्रतीक पाई । हरिचन्द्-नरेश की सचाई ॥
अब सूम ठगी सिखा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥३॥

उपजा युग दूसरा प्रतापी । प्रकटे व्रत-शील और पापी ॥
जिस की सुप्रसिद्ध रीति जानी । समझी रघुनाथ की कहानी ॥

अब रावण जी जला रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥४॥

कर द्वापर कृष्ण की बड़ाई । रच भेद भिड़ा गया लड़ाई ॥
अपना बल आप ही घटाया । छल का फल सर्व-नाश पाया ॥
अबलों कुल मार खा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥५॥

जब से कलि-काल कोप आया । तब से भरपूर पाप छाया ॥
कुल-कण्टक, प्राण ले रहे हैं । ठग दारुण-दुःख दे रहे हैं ॥
जड़, कर्म भले भुला रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥६॥

मुनि-राज मिलें न सिद्ध-योगी । अवनीश रहे न राज-भोगी ॥
सब उद्यम खो गये हमारे । शुभ-साधन सो गये हमारे ॥
खल खेल बुरे खिला रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥७॥

सुविचार, विवेक, धर्म—निष्ठा । प्रण-पालन प्रेम की प्रतिष्ठा ॥
बल, वित्त, सुधार, सत्य-सत्ता । सब को विष दे मरी महत्ता ॥
मति-हीन, हंसी करा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥८॥

तज वैदिक—धर्म—धीरता को । भटकें भट विश्व-वीरता को ॥
निधि निर्मल-न्याय की न भावे । सुविधा न सुधार की सुहावे ॥
अनभिज्ञ सुधी कहा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥९॥

अनमोल असंख्य ग्रन्थ खोये । बन मायिक वेद भी बिगोये ॥
इतिहास मिलें नहीं पुराने । अनुकूल नवीन तंत्र माने ॥
हठ-बाद हठी बना रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥१०॥

व्रत-शील सुबोध हैं न शर्म्मा । रण रोप लड़ें न वीर वर्म्मा ॥
धन-राशि न गुप्त गाढ़ते हैं । गुरु-भाव न दास काढ़ते हैं ॥
चतुराश्रम ढोंग ढा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥११॥

निगमागम छान बीन छोड़े । उपदेश बना दिये गपोड़े ॥
अब जो विधि जाति में भरी है । उस की जड़ श्री बिरादरी है ॥
यश उद्धत-पञ्च पा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥१२॥

भ्रम-भेद भरी पवित्रता है । छल से भरपूर मित्रता है ॥
मन-गेह घने घमण्ड का है । डर केवल राज-दण्ड का है ॥
मत पन्थ नये नचा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥१३॥

मत-भेद पसार फूट फैली । बिन मेल रही न एक शैली ॥
सुख-भोग भगाय रोग जागे । पकड़े अघ-ओघ ने अभागे ॥
दिन संकट के बिता रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥१४॥

उपदेशक लोग लूटते हैं । कटु-भाषण-बाण छूटते हैं ॥
हित-साधन हा ! न सूझते हैं । जड़ जाल पसार जूझते हैं ॥
अड़ ऊत अड़े अड़ा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥१५॥

कचलम्पट पेट के पुजारी । विषयी बन बाल-ब्रह्मचारी ॥
मुख से सब "सोऽहमस्मि" बोलें । तन धार अनेक ब्रह्म डोलें ॥

जड़ जन्म वृथा बिता रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥१६॥

वह योग समाधि-सिद्धि धारी । वह जीवन-वेद रोगहारी ॥
समझे जिन के न अङ्ग पूरे । अब साधु, गदारि हैं अधूरे ॥
रच दम्भ दशा दुरा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥१७॥

विचरें बन ज्योतिषी भरारे । चमकें भ्रम-जाल–जन्य-तारे ॥
उतरे ग्रह वेध की नली में । अटके अब जन्म-कुण्डली में ॥
दिन पोच, खरे बता रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥१८॥

कवि राजसमाज में न बोलें । धनहीन सुधी उदास डोलें ॥
गुण-ग्राहक कल्पवृक्ष सूखे । भटकें भट, शिल्पकार भूखे ॥
शठ आदर से अघा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥१९॥

समझे तन–भार भूषणों को । दमके दमकाय दूषणों को ॥
कविता रस-भाव तोल त्यागे । हलकाय कहीं न और आगे ॥
गढ़ तुकड़ गीत गा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥२०॥

बिरले ध्रुव-धर्म धारते हैं । शुभ-कर्म नहीं बिसारते हैं ॥
तरसें वह वीर रोटियों को । चिथड़े न मिलें लँगोटियों को ॥
कुलबोर–प्रथा पुजा रहे हैं ·
उलटे हम हाय! जा रहे हैं ॥२१॥

बल-हीन अबोध बाल बच्चे । करतूत विचार के न सच्चे ॥
डरपोक सुधार क्या करेंगे । लघु–जीवन भोगते मरेंगे ॥
घटिया कुनबे बढ़ा रहे हैं ।
उलटे हम हाय! जा रहे हैं ॥२२॥

बल-व्याकरणीय वाद को है। फिर न्याय नृसिंह-नाद को है ॥
अभिमान भरी उपाधि पाई। अब शेष रही न पण्डिताई ॥
गुण-गौरव यों गमा रहे हैं।
उलटे हम हाय! जा रहे हैं ॥२३॥

बुध शिक्षक दो प्रकार के हैं। अवतार परोपकार के हैं ॥
उपहार करे प्रदान शिक्षा। बस, वेतन और धर्म-भिक्षा ॥
भर पेट भला मना रहे हैं।
उलटे हम हाय! जा रहे हैं ॥२४॥

समझे, पढ़ अङ्क, बीज, रेखा। फल भिन्न सिलेट से न देखा ॥
क्षितिगोल, खगोल, जानते हैं। पर शब्द-प्रमाण मानते हैं ॥
बुध-वेष बृथा बना रहे हैं।
उलटे हम हाय! जा रहे हैं ॥२५॥

बहु ग्रन्थ रटे न पाठ छोड़े। गटके गुरु--ज्ञान के गपोड़े ॥
अधवैस उमंग में गमाई। पर उत्तम नौकरी न पाई ॥
जड़ उद्यम की जमा रहे हैं।
उलटे हम हाय जा रहे हैं ॥ २६ ॥

ठमके सब ठौर राज-भाषा। थिरके न थकी समाज-भाषा ॥
लिपि बैल-मुतान सी खरी है। पर पोच प्रशस्त-नागरी है ॥
मिल मिस्टर यों मिटा रहे हैं।
उलटे हम हाय! जा रहे हैं ॥२७॥

लिपि लाल-प्रिया महाजनी है। जिस की दर देश में घनी है ॥
प्रिय पाठक! वर्ण दो बना लो। पढ़ चून,चुना,चुनी,चना लो ॥
मुड़िया मति की मुड़ा रहे हैं।
उलटे हम हाय! जा रहे हैं ॥२८॥

ग्रह, योग दबोच डांटते हैं। जड़-तीरथ मुक्ति बाँटते हैं ॥
बलि,पिण्ड न भूत,प्रेत छोड़ें। सुर सार सुभक्ति का निचोड़ें ॥

डर कल्पित भी डरा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ २९ ॥
अति उन्नत राज-कर्मचारी। जिन के कर बाग है हमारी ॥
भरपूर पगार पा रहे हैं। फिर भी कुछ घूंस खा रहे हैं ॥
पद का मद यों जता रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ३० ॥
धमकें धरमार के धड़ा के। अभियोग लड़ा रहे लड़ाके ॥
यदि वेतस न्याय का न देगा। किस को फिर कौन जीत लेगा ॥
सुन कोर्ट-कथा सुना रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ३१ ॥
मृदु नोटिस काम दे रहे हैं। कटु-सम्पुट दाम दे रहे हैं ॥
ठगिया पन से न छूटते हैं। पर-द्रव्य लबार लूटते हैं ॥
करुणामृत यों बहा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ३२ ॥
विधवा रुचि रोक रोरही हैं। कुलटा कुल-कानि खो रही हैं ॥
कर कौतुक गर्भ धारती हैं। जन बालक हाय ! मारती हैं ॥
द्विज धर्म-ध्वजा उड़ा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ३३ ॥
पशु--पोच गले कटा रहे हैं। खल गोकुल को घटा रहे हैं ॥
दधि,माखन,दूध, घी बिसारे। ब्रज-राज कहां गये हमारे ॥
बिन बुद्ध कुधी दबा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ३४ ॥
जल का कर, बीज, ब्याज पोता। भुगताय सकें न भूमि जोता ॥
खलियान अनेक डालते हैं। पर, केवल पेट पालते हैं ॥
घुड़छान किसान छा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ३५ ॥

सब देश कबाड़ दे रहे हैं। धन और अनाज ले रहे हैं ॥
क्षति का लिखते न लोग लेखा। परखे बिन क्या करें परेखा ॥
सुख साज सजे सजा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ३६ ॥

धरणीश, धनी, समृद्धि-शाली। अलमस्त पड़े समस्त ठाली ॥
जड़ जंगम—जीव नाम के हैं। विषयी न विशेष काम के हैं ॥
गढ़ गौरव का खसा रहे हैं।
उलटें हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ३७ ॥

कुल-कंटक दास काम के हैं। नर कायर वीर बाम के हैं ॥
जब जम्बुक—यूथ से डरेंगे। तब सिंह कहाय क्या करेंगे ॥
डरपोक डटे डरा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ३८ ॥

धरणी, धन, धाम देचुके हैं। भरपूर दरिद्र ले चुके हैं ॥
कब मङ्गल से मिलाप होगा? । जब दूर प्रमाद-पाप होगा ॥
अबतो कुबिलास भा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ३९ ॥

भर पेट कड़ा कुसीद खाना। परतंत्र—समूह को सताना ॥
इस को कुल-धर्म जान ते हैं। यश उन्नति का बखान ते हैं ॥
धन धींग-धनी कमा रहे हैं।
उलटे हम ! हाय जा रहे हैं ॥ ४० ॥

सुनलो ! भय त्याग भीरु-लोगो। सुख-भोग सदा समोद भोगो ॥
पकड़ो विधि माल-मस्त ऐसी। किस की अनरीति रीति कैसी ॥
इस भांति सखा सिखा रहे हैं ॥
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ४१ ॥

गरिमा, जयचन्द ने कढ़ाई। महिमा महमूद की चढ़ाई ॥
कलिमा कुरआन का पढ़ाया। कुनबा इसलाम ने बढ़ाया ॥

शठ सिक्ख, शिखा कटा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ४२ ॥

कुल-धर्म कुलीन खो चुके हैं । मक़बूल-मुराद हो चुके हैं ॥
भ्रम-भाजन भक्त भूल के हैं । न मुरीद ख़ुदा-रसूल के हैं ॥
इलहाम-नबी लुभा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ४३ ॥

गुरु-गौरशरीर, शिष्य काले । बन मिश्रित मुक्ति के मसाले ॥
कर प्यार हमें सुधारते हैं । प्रभु-गाड-कुमार तारते हैं ॥
सर-नेटिव आश पा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ४४

चढ़ प्लेग-पिशाच ने पछाड़े । घर दुष्ट-दुकाल ने उजाड़े ॥
पुर,पत्तन देख देख रीते । मरने पर हैं प्रसन्न जीते ॥
कुल कष्ट कड़े उठा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ४५ ॥

सब का अब सर्व-मेध होगा । विधि का न कभी निषेध होगा ॥
बिगड़े न बनी, बनी सरा हैं । परतन्त्र, स्वतन्त्रता न चाहें ॥
ढप ढाड़स के बजा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ४६ ॥

लघु, लोलुप, लालची बड़े हैं । सब दुर्गति-गाढ़ में पड़े हैं ॥
विधि ! क्या अब और भी गिरेंगे । अथवा दिन वे गये फिरेंगे ॥
सुख-हीन जिन्हे बुला रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ४७ ॥

कुछ लोग भला विचारते हैं । जुड़ जाति-सभा सुधारते हैं ॥
अकड़े कर गर्म, नर्म बातें । गरजें मथा मार मार लातें ॥
घर फूंक कुआ खुदा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ४८ ॥

प्रभु-पञ्चम-जार्ज-पूज्य-प्यारे । सिरमौर-प्रजेश हैं हमारे ॥
कर प्रेम-पवित्र पालते हैं । सब के परिताप टालते हैं ॥
मग उन्नति का सुझा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ४९ ॥
अनुभूत अनेक भाव जाने । कविता मिस बुद्धि ने बखाने ॥
यदि सिद्ध-सरस्वती रहेगी । तब तो कुछ और भी कहेगी ॥
भ्रम भारत को भ्रमा रहे हैं ।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं ॥ ५० ॥

अन्योक्ति से उपालम्भ ८

(दोहा)

रोके तेज दिनेश का, रे ! शशि लघुता लाद ।
जैसे ढके महेश को, अन्ध अनीश्वर—वाद ॥१॥

सूर्य ग्रहण पर अन्योक्ति ९

(रुचिरात्मक-राजगीत)

रे ! रजनीश निरङ्कुश तू ने, दिननायक का ग्रास किया ।
नेक न धूप रही धरणी पै, घोर तिमिर ने वास किया ॥
जिस को पाय चमकता था तू, अधम ! उसी को रोक रहा ।
धिक ! पापिष्ट कृतघ्न कलङ्की, तेज त्याग तम पास किया ॥
मन्द हुआ सुन्दर-मुख तेरा, छिटकी छवि तारा-गण की ।
अपने आप जाति में अपना, क्यों इतना उपहास किया ॥
जुगुनू जाग उठे जङ्गल में, दिये नगर में जलवाये ।
मूँद महा-महिमा महान की, अणु का तुच्छ-विकास किया ॥

मङ्गल मान निशाचर सारे, चलते और विचरते हैं।
दिन को रूप दिया रजनी का, देव-समाज उदास किया ॥
उष्ण-प्रभा बिन वन-पुष्पों से, सार सुगन्ध न कढ़ते हैं।
रोक चाल नैसर्गिक-विधि की, दिव्य-हवन का ह्रास किया ॥
चकित--चकोर चाह के चेरे, चिनगी चुगते फिरते हैं।
मुख, पग, पंख, जलाने वाला, ज्वलित चन्द्रिकाभास किया ॥
श्वान, शृगाल, उलूक पुकारे, सकुचे कंज, कुमोद खिले।
जोड़ तोड़ चकई, चकवों के, खण्डित प्रेम-विलास किया ॥
दिन में चुगने वाली चिड़ियां, हा ! अब कहीं न उड़ती हैं।
सब के उद्यम हरने वाला, सिद्ध तामसिक-त्रास किया ॥
नाम सुधाकर है पर तेरी, लघुता विष बरसाती है।
विरहानल को भड़काने का, अतिनिन्दित अभ्यास किया ॥
बढ़ बढ़ कर पूरा होता है, घटता घटता लुपता है।
यों उन्नति, अवनति के द्वारा, पक्ष--भेद प्रतिमास किया ॥
तेरी आड़ हटाकर निकली, कोर प्रचण्ड--प्रभाकर की।
फिर दिन का दिन होजावेगा, हट ! क्यों वृथा प्रयास किया ॥
दिव्य उजाला देकर तुझ को, परसों फिर चमकावेगा।
कहदे कब सविता स्वामी ने, श्रीहत अपना दास किया ॥
शङ्कर के मस्तक पर तेरा, अविचल--वास बताते हैं।
पौराणिक-पुरुषों ने भ्रम से, अटल अन्ध--विश्वास किया ॥

अरण्यरोदन १०

(दोहा)

रोते फिरो अरण्य में, विनय सुनेगा कौन।
शङ्कर--दीनानाथ का, ध्यान धरो धर मौन ॥१॥

(शिखरिणी–षट्क)

अभागे जीते हैं, पुरुष बड़भागी मरगये ।
भरे भी रीते हैं, घर नगर सूने करगये ॥
प्रतिष्ठा खोने को, पतित-कुल हा! जीवन धरे ।
हमारे रोने को, सुन कर कृपा शङ्कर करे ॥१॥

कुचालों ने मारे, मनुज मतवाले कर दिये ।
कुपन्थों में सारे, विकट कटु-भाषी भर दिये ॥
हठीले होने को, हठ न अगुओं की मति हरे ।
हमारे रोने को, सुन कर कृपा शङ्कर करे ॥२॥

दुराचारी दण्डी, जटिल जड़ मुण्डे मुनि घने ।
प्रमादी पाखण्डी, अबुध-गण गुण्डे गुरु बने ॥
अविद्या ढोने को, विषय-रस का रेवड़ चरे ।
हमारे रोने को, सुन कर कृपा शङ्कर करे ॥३॥

विरोधी राजाके, छल कर प्रजा का धन हरें ।
घिनोने पापों से, वधिक नर-घाती कब डरें ॥
मलों के धोनेको, सुकृत-धन पुण्योदक धरे ।
हमारे रोने को, सुन कर कृपा शङ्कर करे ॥४॥

क्षुधा हत्यारी ने, उरग--इव नारी नर डसे ।
मसोसे मारी ने, चटपट बिचारे चल बसे ॥
सदा केसोने को, अब न दुखियों का दलमरे ।
हमारे रोने को, सुन कर कृपा शङ्कर करे ॥५॥

बनी को रो बैठे, बिगड़ सुख के साधन गये ।
सुधी श्री खो बैठे, धन बिन भिखारी बन गये ॥
न काँटे बोने को, कुमति कुटिलों में भ्रम भरे ।
हमारे रोने को, सुन कर कृपा शङ्कर करे ॥६॥

भूलों को भूलो ११

(दोहा)

भूल रहे भूले फिरें, भूल भरे परिवार ।
भूलों का करते नहीं, भूल बिसार सुधार ॥१॥

भारत की भूलें १२

(कजली-कलाप)

बोलो बोलो कैसे होगा,
ऐसी भूलों का सुधार ॥टेक॥

शुद्ध—सच्चिदानन्द एक है, शंकर—सकलाधार ।
निर्गुण, निराकार, स्वामी को, कहैं सगुण, साकार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥१॥

मतवालों ने मानलिया है, जो सब का करतार ।
बैर, फूट बोगये उसी के, दूत, पूत, अवतार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥२॥

बिरले विज्ञानी करते हैं, वैदिक—धर्म प्रचार ।
भूल भरें भोलों के कुल में, बहुधा लंठ—लबार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ३ ॥

ठीक ठिकाना बतलाने के, बन बन ठेकेदार ।
ठगिया औरों को ठगते हैं, जटिल-गपोड़े मार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥४॥

कल्पित—स्रष्टा के सूचक हैं, समझे असदुद्गार ।
योंहीं अपने आप हुआ है, यह समस्त संसार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥५॥

भिन्न भिन्न विश्वास हमारे, भिन्न भिन्न व्यवहार ।
भेद भिन्नता के अपनाये, भिन्न चलन आचार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥६॥

सिद्धों के आगम-कानन को, काटें कुमत-कुठार ।
समझें सद्ग्रन्थों को जड़-धी, जड़ता के अनुसार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥७॥

विद्या के मन्दिर हैं जिन के, गुण-धर-ज्ञानागार ।
होड़ लगाते हैं उन से भी, गौरव हीन गमार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥८॥

विज्ञ-ब्रह्मचारी करते हैं, अभिनव-आविष्कार ।
सुबुध बने बच्चों के बच्चे, उन की सीधज धार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥९॥

फैली फूट लड़ें आपस में, बैर बिरोध पसार ।
कहिये ? ये फुट्टेल करेंगे, कब किस का उद्धार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥१०॥

करडाला आलस्य योग ने, हल चल का संहार ।
कर्म-हीन बन्धन से छूटे, ब्रह्म बने सविकार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥११॥

पति पूजे श्रीपति को, पत्नी, परसे मियां, मदार ।
दो मत जुड़े एक जोड़ी में, ठनी रहै तकरार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥१२॥

भिक्षुक, भूखों पै पड़ती है, निठुर दैव की मार ।
हा ! न अनाथों को अपनाते, करुणा कर दातार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥१३॥

अपने कुल कपूतों पै भी, करें कृपा कर प्यार ।
औरों के व्रत-शील सुतों को, समझें भूतल-भार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥१४॥

देशी-शिल्पकार दुख भोगें, बैठ रहे मन मार ।
देखो दस्तकार-परदेशी, सुख से करें बिहार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥१५॥

उन्नति-शील विदेशी फूलें, कर उद्यम व्यापार ।
हम ठाली रोते हैं उन की, ओर निहार निहार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ १६ ॥

रहे कूप-मण्डूक न देखा, विशद-विश्व-बिस्तार ।
हाय हमारी रोक टोक पै, पड़ी न अबलों छार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ १७ ॥

रंग रंग सम्पति की सेना, पहुँची सागर पार ।
रीता हुआ हाय! भारत का, अब अक्षय-भण्डार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ १८ ॥

जिन के गुरु ज्ञानी जीते थे, प्रभुता पाय अपार ।
उन को अपने आपे पै भी, नहीं रहा अधिकार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ १९ ॥

सिंह नाम धारी रसिकों ने, फेंक दिये हथियार ।
उगलें राग बजें तम्बूरे, तबले, वेणु सितार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ २० ॥

शर्मा, वर्मा, गुप्त, उपजते, अब दासत्व बिसार ।
तो फिर ऊँचे क्यों न चढ़ेंगे, कंजर, डोम, चमार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ २१ ॥

बीर—धर्म की टेक टिकाई, गलमुच्छे फटकार ।
औसर आते ही बन बैठे, केहरि कायर-स्यार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ २२ ॥

देखें चित्र, चरित्र, बड़ों के, पढ़ें पुकार पुकार ।
तो भी हा ! न दुर्दशा अपनी, निरखें आंख उघार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ २३ ॥

अधम, आततायी, पाखण्डी, उजबक, ज्वारी, जार ।
गौरव, दान, मान पाते हैं, साधु—बेष बटमार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ २४ ॥

विधि-बल्लभ का बाणी से भी, करें न शठ सत्कार ।
नीचों में मिलते, उस ऊँचे, पौरुष पर धिक्कार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ २५ ॥

कामी—कौल कुकर्म पसारें, खोल प्रमाद-पिटार ।
खोंटे रहे खसोट सभ्यता,-दुलहिन का शृङ्गार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ २६ ॥

आठ वर्ष की गोरि कुमारी, बरे अजान कुमार ।
बाल-विवाह गिराता है यों, घेर घेर घर बार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ २७ ॥

डोकर छैला बने छोकड़ी, बरनी के भरतार ।
छी छी छी बुढ़वा-मंगल को, तजें न ऊत उतार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ २८ ॥

दारा-गण के गीत निचोड़ें, बनिता पनका सार ।
धन्य अविद्या-दुलही तेरा, देख लिया दरबार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ २९ ॥

हाय! बच्चियों पै रखते हैं, विधवा पन का भार।
धर्म-शत्रु हेकड़ पञ्चों के, हटें न नीच-विचार॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ३० ॥

त्याग प्रमाण प्रेम से पूजें, हठ के पैर पखार।
दुष्ट—दुराचारी करते हैं, अनुचित-अत्याचार॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ३१ ॥

धर्म कर्म का ढोल बजाना, कर ने से इनकार।
क्या! वे बकवादी उतरें गे, भव-सागर से पार॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ३२ ॥

मदिरा, ताड़ी, भङ्ग, कसूमा, रङ्ग निचोड़, निथार।
पीते बीर, न कण्टक जाने, मादक-व्रत की सार॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ३३ ॥

झुलसे चाँडू-बाज़, गँजेड़ी, मदकी, चरसी, चार।
झाड़ झाड़ चूसें चिलमों को, अङ्ग पजार पजार॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ३४ ॥

हुल्लड़, हुरदंगों की मारी, लाज लुकी हियहार।
कौन कहै गोरी रसियों की, महिमा अपरम्पार॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ३५ ॥

देखो! भाव घटे गोरस का, बढ़ें न घृत के बार।
फिर भी गौओं पर खौओं की, चलती है तलवार॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ३६ ॥

लाखों पत्तन, ग्राम उजाड़े, घटे घने परिवार॥
काल-कराल महामारी का, हा! न हुआ प्रतिकार।
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ३७ ॥

फ़िल्टर—वाटर से भी चोखी, सुरसरिता की धार।
गोड़ें उसे गोल गटरों के, नरक-नदी के यार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ३८ ॥
राम राम, पालागन, भावे, जय गोपाल, जुहार।
करें सलाम, नमस्ते ही को, समझें वज्र—प्रहार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ३९ ॥
जिस की कविता के भावों पै, रीझे रसिक—उदार।
टालें उस को वाह वाह के, दे दे कर उपहार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ४० ॥
अब तो आशा के कमलों पै, बरसे बैर-तुषार।
गाने के मिस रोन अभागे, शङ्कर धीरज धार ॥
ऐसी भूलों का सुधार ॥ ४१ ॥

हमारी दुर्दशा १३

(शार्दूल विक्रीडित-वृत्त)

आबैठी उर मोह—जन्य-जड़ता, विद्या विदा होगई।
पाई कायरता मलीन मन को, हा! वीरता खोगई ॥
जागी दीन—दशा दरिद्र-पन की, श्री-सम्पदा सोगई।
माया शंकर की हँसाय हम को, रुद्रा बनी रोगई ॥

अन्योक्ति से शोक—सूचना १४

(दोहा)

विधि क्या से क्या होगया, अटकी काल-कुचाल।
हंसों की महिमा मिटी, बगला बने मराल ॥१॥

अन्योक्ति मूलक मनोवेदना १५

(सुन्दरी- सवैया)

इस मानसरोवर से अपनी, उस पोखर का न मिलान करेंगे ।
पिक, चातक, कीर, चकोर, शिखी, सब का अबतो अपमान करेंगे ॥
"कवि शङ्कर" काक, श्वान, कुही, -कुल को अति आदर दान करेंगे ।
बक राजमराल बने पर हा!, जल त्याग, न गोरस पान करेंगे ॥१॥

कुपात्र-पुरोहित १६

(घनाक्षरी-कवित्त)

जन्म की बधाई धर, नाम की धराई, पूजा,
मुण्डन की और कर्ण-बेधन की पावेंगे ।
ब्रह्म-दण्ड देंगे, लेंगे चरण-पुजाई, आगे,
ब्याह के अनेक नेग चौगुने चुका वेंगे ॥
लेते ही रहेंगे दान दक्षिणा पुरोहित जी,
रोगी-यजमान से दुधार धेनु लावेंगे ।
शङ्कर ! मरे पै माल मारेंगे त्रयोदशा के,
छोड़ेंगे न बरसी कनागत भी खावेंगे ॥१॥

कोरेकथक्कड़ १७

(दोहा)

रुग्डी के रसिया बने, उपदेशक जी आप
औरों से कहते फिरें, गणिका-गण के पाप ॥१॥

एक व्याख्याता पर वेश्या की तान १८

(महागीत)

ऊल उगल रहा उपदेश,
गढ़ गढ़ मारे ज्ञान गपोड़े ॥टेक॥

पण्डित बना निरंकुश मूढ़, कपटी अधम अधर्मारूढ़,
इस के गन्दे अव-गुण-गूढ़, सुन लो कान लगाकर थोड़े ।
ऊ० उ० उ० ग० मा० ज्ञा० गपोड़े ॥
बकता फिरता है दिन रात, सब से कहता है यह बात,
मारो गणिका-गण पर लात, अपने कूट-कुकर्म न छोड़े ॥
ऊ० उ० उ० ग० मा० ज्ञा० गपोड़ें ॥
मेरा सुन्दर-वदन बिलोक, तन को, मन को सका न रोक,
झपटा, झटका पटका ठोक, अटका बार बार कर जोड़े ।
ऊ० उ० उ० ग० मा० ज्ञा० गपोड़े ॥
पकड़े काकोदर-विकराल, चूमे जलज-प्रफुल्लित-लाल,
पूजे शङ्कर-युगल-बिशाल, ठग ने बाण मदन के तोड़े ॥१॥
ऊ० उ० उ० ग० मा० ज्ञा० गपोड़े ॥

शृङ्गार-सेवक १८

(दोहा)

पूजें नायक, नायिका, जिनको मङ्गल माम ।
क्यों न करें शृङ्गार के, वे सत्कवि गुण गान ॥१॥

सुकविसमाज १९

(गीत)

गुण गान करें रसराज के,
यश-भाजन सुकवि हमारे ॥टेक॥
वैसिक, धृष्ट, ऊत, पण्डित हैं, धर्म-चतुष्टय से मण्डित हैं,
त्रिविध खण्डित से खण्डित हैं, नख-शिख रसिक-समाज के,
रति-वल्लभ, मदन-दुलारे ।
यश-भाजन सुकवि हमारे ॥

निरखी रस में बोर अनूढ़ा, निपट अछूती रही न ऊढ़ा,
परखी विदुषी और विमूढ़ा, सफल नयन कर लाज के,
हँस मधुर वचन उचारे ॥
यश भाजन सुकवि हमारे ॥
धर अज्ञात यौवना पटकी, मन में ज्ञात यौवना अटकी,
हाय नवोढ़ा की छवि खटकी, पकड़ चरण शुभ-काज के,
छल-जल बरसाय पखारे ।
यश-भाजन सुकवि हमारे ॥१॥
साध स्वकीया शुद्ध-लगन से, पूजी परकीया तन, मन से,
गणिका भी अपनाली धन से, कर करतब सुख-साज के,
शंकर कुल-चरित सुधारे ।
यश-भाजन सुकवि हमारे ॥ १ ॥

होली का हुरदङ्ग १८

(दोहा)

होली के हुरदङ्ग ने, धार कुमति का रङ्ग ।
छोड़ी लाज, समाज का, करडाला रस-भङ्ग ॥ १ ॥

बेजोड़ होली १९

(गीत)

भारत ! कौन बदेगा होड़,
तुझ से होली के हुल्लड़ की ॥ टेक ॥
मटकें मतवालों के गोल, खेलें खोल खोल कर पोल,
पीटें ढोर ढमाढम ढोल, गाते डोलें तान अकड़ की ।

भा० कौ० ब० हो० तु० हो० हुल्लड़ की ॥
ऊले प्रामादिक-हुरदङ्ग, बरसे दुर्व्यसनों का रङ्ग,
उमगी झूमें भ्रम की भङ्ग, लीला ऐंठ दिखाती अड़की ॥
भा० कौ० ब० हो० तु० हो० हुल्लड़ की ॥
शुद्धा विधि का वेष बिगाड़, फरियां लोक-लाज की फाड़,
झंझट झोंके झगड़े झाड़, फूँके, आग बैर की भड़की ।
भा० कौ० ब० हो० तु० हो० हुल्लड़ की ॥
विद्या-बल से पिण्ड छुड़ाय, धन की पूरी धूलि उड़ाय,
"शङ्कर" धी का मुण्ड मुड़ाय, फूटी आंख फूट की फड़की ॥
भा० कौ० ब० हो० तु० हो० हुल्लड़ की ॥ १ ॥

होली का हुल्लड़ २०

(दोहा)

होली का हुल्लड़ मचा, उलें उजबक ऊत ।
भूखे भारत पै चढ़ा, भड़क-भ्रम का भूत ॥ १ ॥

होलिकाष्टक २१

(सुभद्रा-छन्द)

उद्यम को कर अन्ध, आंख अवनति ने खोली है ।
धन की धूलि उड़ाय, अकिञ्चनता हँस बोली है ॥
ठसक भीतर से पोली है ।
खुल खुल खेलो फाग, भड़क भारत की होली है ॥ १ ॥
गर्ब--गुलाल लपेट, रङ्ग रिस का बरसाया है ।
खाय बैर-फल फूट, फड़कता फगुआ पाया है ॥

भरी अनबन से झोली है।
खुल खुल खेलो फाग, भड़क भारत की होली है ॥ २ ॥

शोणित-लाल सुखाय, लने तन पीले करलाये।
पट पट पीटें पेट, सांग मुक्खड़ भी भरलाये ॥
अधोगति सब को रोली है।
खुल खुल खेलो फाग, भड़क भारत की होली है ॥ ३ ॥

गोरी-धन पर आज, धनी की चाह टपकती है।
श्यामा लगन लगाय, पिया की ओर लपकती है ॥
चढ़ी चञ्चल पर भोली है।
खुल खुल खेलो फाग, भड़क भारत की होली है ॥ ४ ॥

लोक-लाज पर लात, मार कर बात बिगाड़ी है।
ऊल रहा हुरदङ्ग, सुमति की फरिया फाड़ी है ॥
अकड़ की चमकी चोली है।
खुल खुल खेलो फाग, भड़क भारत की होली है ॥ ५ ॥

ऊल ऊल कर ऊत, ढमा ढम ढोल बजातेहैं।
थिरकें थकें न थोक, गितकड़, तुकड़ गाते हैं ॥
ठना ठन ठनी ठठोली है।
खुल खुल खेलो फाग, भड़क भारत की होली है ॥ ६ ॥

सब के मस्तक-लाल, न किस का मुखड़ा काला है।
भङ्गड़ भस्म--रमाय, रहे हुल्लड़ मतवाला है ॥
न इस में कण्टक-टोली है।
खुल खुल खेलो फाग, भड़क भारत की होली है ॥ ७ ॥

चढ़े न भ्रम की भङ्ग, कहीं पौराणिक-शङ्कर को।
समझे अपने भूत, न ऐसे यूथ भयंकर को ॥

निरन्तर-समता होली है ।
खुल खुल खेलो फाग, भड़क भारत की होली है ॥ ८ ॥

फक्कड़ का फाग २२

(दोहा)

फूँकी होली सुमति की, देकर अड़ की आग ।
खेले दीन दिवालिया, भारत-भिक्षुक फाग ॥ १ ॥

दिवालिया देश की होली २३

(घनाक्षरी-कवित्त)

ऊलें अवधूत नाचें दूत भूतनाथ के से,
हाट हुरदङ्ग ने असभ्यता की खोली है ।
अङ्गों में अनङ्ग की जगावे ज्योति मादकता,
लाज के ठिकाने ठनी शङ्कर ठठोली है ॥
लालिमा उड़ावेगी दरिद्रता के दङ्गल में,
कालिमा के कर में गुलाल भरी झोली है ।
धूलि में मिलेगी कल ही को लीला हुल्लड़ की,
भारत दिवालिया की आज हाय होली है ॥ १ ॥

हायरे ! होली २४

[दोहा]

फागुन में फूले फिरें, खुल खुल खेलें फाग ।
गोरी, रसियों को फले, रङ्ग, राग, अनुराग ॥ १ ॥

होली है २५

[घनाक्षरी कवित्त]

देखो रे! अजान, ऊत खेलें फाग फागुन में,
भङ्ग की तरङ्गों में अनङ्ग सरसाया है।
बाजें ढप, ढोल नाचें गोल बांध बांध गावें,
साखी सर बोल भारी हुल्लड़ मचाया है॥
बौरे अवधूत भूखे भारत के छैला बने,
भूत-गण जान धोखा शङ्कर ने खाया है।
दूर मारी लाज आज गाज गिरी सभ्यता पै,
संठों का समाज लंठ-राज बनिआया है॥ १॥

पढुओं की होली २६

[दोहा]

सम्पादक छैला बने, रसिक बने लिक्खाड़।
होली के हुरदंग की, देख उखाड़ पछाड़॥ १॥

पत्रिका और पत्रों की होली २७

*[घनाक्षरी-कवित्त]

माता भगिनी का भाव भावे न बसुन्धरा को,
लक्ष्मी का लक्ष्य कमला के मन भाया है।
चन्द्रिका प्रभा के बीच सन्ध्या का गुलाल उड़े,
पण्डिता--सरस्वती ने रङ्ग बरसाया है॥

*माता १, भारतभगिनी २, बसुन्धरा ३, लक्ष्मी ४, कमला ५, निगमागम चन्द्रिका ६, शुभांतियाप्रभा ७, सन्ध्या ८, सरस्वती ९, मोहिनी १०, हितवार्ता ११, प्रियम्वदा १२, सनातन-धर्म-पताका १३, वनिताहितैषिणी १४, बिहारीलाल = रसिकमित्र १५।

मोहिनी सी डाले हितवारता प्रियम्वदा की,
सौरभ सनातनी-पताका ने उड़ाया है।
लूली-बहू, बनिताहितैषिणी बनाई है तो,
शङ्कर विहारी-लाल लूलू-बनिआया है॥ १॥

खोटा बेटा ३८

[दोहा]

बात बिगाड़ी बाप की, कर कपूत ने पाप।
प्राण बिसारे सीस पै, धार कुकर्म-कलाप॥ १॥

उद्धत-धूर्त ३९

(गीत)

ऊलें उद्धत ऊत उतार,
धन की धूलि उड़ानेवाले॥ टेक॥
श्रम का सारा सार निचोड़, देकर डेढ़लाख का जोड़,
तन से धन से नाता तोड़, चलते हुये कमानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले॥
पूँजी कृपण-पिता की पाय, मोधू उच्च-कुलीन कहाय,
मन की माया को उमगाय, उफने पेट फुलानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले॥
छैला लिखना, पढ़ना छोड़, अकड़ें विद्या से मुख मोड़,
फूले आंख सुमति की फोड़, पशुता को अपनानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले॥
भाये बढ़िया भोग-विलास, बैठे वञ्चक, पामर पास,
करते सिंहों का उपहास, गीदड़ गाल बजाने वाले।

ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले ॥

पाये मन भाये सुख-भोग, सूझे विषयों के अतियोग,
घेरें चाटुकार ठगलोग, अटके भुक्खड़ खानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले ॥

निथरे, छने कसूमा, भङ्ग, उड़ने लगी वारुणी सङ्ग,
चांडू, मदक बिगाड़े ढङ्ग, झूमें चिलम चढ़ानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले ॥

गायक राग-रंगीले गाय, नर्त्तक नाचें नाच नचाय,
लूटें ढोल बजाय बजाय, कत्थक, भांड़, रिझानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले ॥

सुन्दर-बेष छोकड़े धार, विरचें श्यामा-श्याम-बिहार,
घूरें रोचक-रास निहार, भावुक-भक्त कहानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले ॥

लेकर नारि पराई साथ, धोते सुकृत-सुधा में हाथ,
पीते सुरसरिता का पाथ, आवागमन छुड़ानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले ॥

फूटा, फैल गया उपदंश, पिघला वारबधू का अंश,
उत्तम उपजाने को वंश, निकले नाक सड़ानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले ॥

ऋण से बढ़ा ब्याज का मान, बंगले, कोठी, घर, दूकान,
देकर बेचा सब सामान, बिगड़े ठाठ बनानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले ॥

खोकर माल बने कंगाल, पञ्जर सूखा, पटके गाल,
ओढ़ें चिथड़े लटकी खाल, भिनकें बाल बढ़ानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० उ० उड़ानेवाले ॥

जो खल खाते ठोकर लात, दाता कहते थे दिन रात,
वे अब नहीं पूछते बात, भटकें चने चबानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले ॥
भिक्षुक हो बैठे निरुपाय, निकला हितू न कोई हाय, !
छोड़े प्राण हलाहल खाय, उठते नहीं उठानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले ॥
ऐसे दाहक–दृश्य विलोक, शङ्कर किसे न होगा शोक,
अब तो गुंड़ों की गति रोक, ठाकुर! ठीक ठिकानेवाले।
ऊ० ऊ० उ० ध० उड़ानेवाले ॥ १ ॥

हा! क्या से क्या होगया ३०

(दोहा)

द्वार अविद्या का किया, जिस भारत ने बन्द।
नारी हैं उस देश की, अब ऐसी मति मन्द ॥ १ ॥

अनार्य्या-भार्या ३१

(घनाक्षरी-कवित्त)

आखतें दिखाऊँगी अघोरी से न और कहीं,
भोंदुआ के बाप का छदाम ठगवाऊँगी।
मीरा मनवाऊँगी जमात जोड़ जोगनों की,
गूँगा-पीर-ज़ाहर की जोति जगवाऊँगी ॥
चादर चढ़ाऊँगी बराही के चबूतरा पै,
भोर उठ चूहड़े का झाड़ा लगवाऊँगी।
टोना टलवाऊँगी गपोड़े मान शङ्कर के,
जीजी इस लाला पै हरा न हगवाऊँगी ॥ १ ॥

कुमाता ३२

(दोहा)

लोट रहा क्यों धूलि में, उठ उठ मेरे लाल ।
चल दादी का फोड़दे, बेलन मार कपाल ॥ १॥

रूंठे लाल को लोरी ३३

(गीत)

मत रोवे ललुआ लाड़ले,
हँस बोल मनोहर बोली ॥टेक॥
हाय ! धूलि में लोट रहा है, मेरी खाल खसोट रहा है,
काटे बाल बकोट रहा है, उठ कर झगुली झाड़ले,
ले बिगुल, फिरकनी, गोली ।
हँस बोल मनोहर बोली ॥
मान कहा कनियां में आजा, पीकर दूध मिठाई खाजा,
खेल बालकों में बन राजा, सब को पटक पछाड़ले,
हटजाय न अटके टोली ॥
हँस बोल मनोहर बोली ॥
प्यारे ! पीट बहन–बाई को, पकड़ बुआ को भौजाई को,
घेर घसीट चची, ताई को, झटपट लहँगे फाड़ले,
फिर तार तार कर चोली ।
हँस बोल मनोहर बोली ॥
दे दे गाली कुनबे भर को, नाच नचाले सारे घर को,
ठोक सबे बाबा शङ्कर को, निभड़क मूँछ उखाड़ले,
कर ठसक पिता की पोली ॥
हँस बोल मनोहर बोली ॥१॥

मोधू कविराज ३४

[दोहा]

घूँसे कविता-जोंक ने, मान-हीन-कवि-राज ।
मार कुमित्रा की सहैं, समझ कोढ़ में खाज ॥१॥

कर्कशा ३५

(मालती सवैया)

सास मरे ससुरा पजरे इस, बाखर में पल कों न रहूँगी ।
सौति जिठानी छटी ननदी अब, एक कहैगी तो लाख कहूँगी ॥
जेठ जलाबा को मारूँ पटा सुन, देवर की फबती न सहूँगी ।
लेबस अन्त नहीं पिया शंकर, पीहर की कल गैल गहूँगी ॥ १॥

महामारी की मार ३६

(दोहा)

मोह-जाल में जो फँसे, बिन विज्ञान-विकाश ।
क्यों न महामारी करे, उन असुरों का नाश ॥१॥

धूमकेतु ३७

(गणेश-गीत)

बिकराल-कलेवर धार,
धरा पर धूम्र-केतु आये ॥टेक॥
तक तक तीर मार ने मारे, रुद्र-देव ने नयनँ उघारे,
जो रिस रही तीसरे दृग में, उस ने उपजाये ।
बि० क० धा० ध० धू० आये ॥

त्रिभुवन-काल-पिता के प्यारे, छीन लिये रुज-सेवक सारे,
आदर पाय रोग-मण्डल में, अगुआ कहलाये ॥
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥
सर्व-नाश के रसिक-सयाने, व्यास-देवने प्रभु जब जाने,
तब तो आप महाभारत के, लेखक ठहराये ।
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥
अब सटकारी-शुण्ड नहीं है, तन मोटा गज-मुण्ड नहीं है,
महिमा छोड़, गूढ़-लघिमा की, पूँछ पकड़ लाये ॥
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥
अङ्ग असंख्य कीट अति छोटे, साठ बाल से अधिक न मोटे,
अणुमय आप यंत्र के द्वारा, देख परख पाये ।
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥
जब से प्रभु का ठीक ठिकाना, हम ने धरणी-तल में जाना,
तब से पूज पूज जड़ ढेले, सब से पुजवाये ॥
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥
गुप्त-विहार किया करते हो, केवल पावक से डरते हो,
वैदिक-होम-हीन-भारत पै, निर्भय चढ़ धाये ।
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥
ठौर ठौर मुरदे गढ़ते हैं, प्रभु के भोगस्थल बढ़ते हैं,
इन भूलों पर हाय! अभागे, नेक न पछताये ॥
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥
कालकूट बिल में घुस घोलें, प्रभु को लाद लुड़कते डोलें,
क्षुद्र-काय-बाहन-द्रुतगामी, मूषिक मन भाये ॥
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥
जितने चूहों पर चढ़ते हो, मार मार करते बढ़ते हो,
वे सब के सब प्रेत-लोक को, पल में पहुँचाये ॥

वि० क० धा० ध० धू० आये ॥

बीन बीन कर दीन बिचारे, जीवन, आशा-हीन कर मारे,
पीन-कुटुम्ब धींग धनिकों के, ढिल्लड़ कर ढाये ।
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥

मानव-दल पल्लव से तोड़े, बानर, कीट, पतङ्ग, न छोड़े,
उरग, बिहङ्ग, और चौपाये, बलि बनाय खाये ॥
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥

पहले तीव्र-ताप चढ़िआवे, पीछे कठिन-गांठ कढ़िआवे,
पुनि प्रलाप यों भाँति भाँति के, कौतुक दरसाये ।
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥

देख देख भय, शोक, उदासी, बिकल पुकारें भूतल बासी,
हुआ हर्ष कर्पूर, कमल से, मुखड़े मुरझाये ॥
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥

खात खात इतने दिन बीते, किये ग्राम, पुर, पत्तन रीते,
अबलों अपने लम्बोदर को, नाथ! न भरपाये ।
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥

हम से नाम अनेक धराये, अरब जाय ताऊन कहाये,
पाय प्लेग पद अँगरेज़ों से, इतने इतराये ॥
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥

कांप रहे कविराज हमारे, बचते फिरें तबीब बिचारे,
डाक्टरों की अकड़ पकड़ से, नेक न सकुचाये ।
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥

अब तो देव! दया उर धारो, नर भक्षण की बान बिसारो,
सेवक भूत बने जंगल के, छनियाँ घर छाये ॥
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥

पोल खोल ढिलमिल ढाँचे की, रचना रच रूपक-साँचे की,
इस में ताय तुम्हें शङ्कर ने, बेढब ढलकाये ।
वि० क० धा० ध० धू० आये ॥१॥

मन्दोद्गार ३८

(दोहा)

अन्ध अँधेरे में सुनो, करलो अँखियाँ बन्द ।
उगलेंगे अन्धेर यों, अबुध-अविद्यानन्द ॥ १ ॥

अविद्यानन्द का व्याख्यान ३९

(भुजंग्यात्मक-मिलिन्दपाद)

तुही शंकराधार संसार है । निराकार है और साकार है ॥
बना सर्व-स्रष्टा-विधाता तुही । गुणी निर्गुणी दर्प-दाता तुही ॥
खिली आज तेरी कृपा की कली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥ १ ॥

नकीला नहीं सूँघता गन्ध है । निहारे बिना आँख का अन्ध है ॥
सुने तू बिना कान बूँचा रहै । छुये पै अछूता समूँचा रहै ॥
मिला तू गिरा-हीन वक्ता-बली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥ २ ॥

अरे ओ अजन्मा ! कहां तू नहीं । न कोई ठिकाना जहां तू नहीं ॥
किसी ने तुझे ठीक जाना नहीं । इसी से यथातथ्य माना नहीं ॥
शिखा सत्य की झूँट ने काटली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥ ३ ॥

तुझे तर्क ने तोल पाया नहीं । किसी युक्ति के हाथ आया नहीं ॥
कहीं कल्पना बांझ का पूत है । कहीं भावना का महा-भूत है ॥

मिलेगी किसी को न तेरी गली ॥
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥ ४ ॥
कला अस्ति की जानती है तुझे । न धी बुद्ध की मानती है तुझे ॥
कहा सच्चिदानन्द तू वेद ने । बताया नहीं भेद निर्भेद ने ॥
न चूके दुई की दुनाली चली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥ ५ ॥
मुझे क्या किसी भाँति का तू सही । कथा मंगलाभास की सी कही ॥
जहाँ भक्ति तेरी रहैगी नहीं । वहां धर्म-धारा बहैगी नहीं ॥
करे क्या पड़ी कीच में निर्मली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥ ६ ॥
कटीली कृपा है महाराज की । अड़ीली अथाई जुड़ी आज की ॥
भिड़ी भिन्नता के महा भक्त हैं । सिड़ी एकता के न आसक्त हैं ॥
भरी भीड़ से पुण्य-कर्मस्थली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥ ७ ॥
अरे ! आज मेरी कहानी सुनों । नई बात पोथी पुरानी सुनों ॥
किसी अंश पै दंश देना नहीं । यहाँ तर्क से काम लेना नहीं ॥
डिगेगी नहीं डांट से मंडली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥ ८ ॥
अरे जो न माने बड़े का कहा । उसे ध्यान क्या सभ्यता का रहा ॥
युगाचार का भूलना भूल है । अविश्वास अन्धेर का मूल है ॥
मिली मानदा-धर्म-ग्रन्थावली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥ ९ ॥
लिखा है कि लज्जा रहैगी नहीं । कुशिक्षा किसी की सहैगी नहीं ॥
मिले मेल का नाश होजायगा । जगा बैर को प्रेम सोजायगा ॥
खिलाता खलों को खिलाड़ी-कली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥ १० ॥

चलो ताकते काल की चाल को। घसीटो धनी और कंगाल को ॥
डरेगा नहीं जो किसी पाप से। बचेगा वही शोक सन्ताप से ॥
उठाता नहीं कष्ट कोई भली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥ ११ ॥

सुने स्वर्ग से लौ लगाते रहो। पुनर्जन्म के गीत गाते रहो ॥
डरो कर्म प्रारब्ध के योग से। करो मुक्ति की कामना भोग से ॥
अश्रद्धा-सुधा से भरो अञ्जली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥१२॥

मशीनों पड़े देव सोते रहैं। महीदेव डूबे डुबोते रहैं ॥
मरी चेतना-हीन गंगा बही। न पूरी कला तीरथों में रही ॥
कमाऊ जड़ों की न पूजा टली।
न विज्ञान न फूला न विद्या-फली ॥१३॥

निकम्मे सुरों की न सेवा करो। चढ़े भूतनी भूतड़ों से डरो ॥
मसानी मियाँ को मना लीजिये। जखैया रखैया बना लीजिये ॥
करेंगे बली निर्बलों को अली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥१४॥

हँसो हंस को शारदा को तजो। उलूकासनी-इन्दिरा को भजो ॥
धनी का धरो ध्यान छोटे बड़े। रहो-द्रव्य की लालसा में खड़े ॥
मिला मेल मा से महा-मंगली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥१५॥

अनारी गुणी मानते हैं जिन्हें। गुणी जालिया जानते है जिन्हें ॥
उन्हे दान से मान से पूजिये। हठी हेकड़ों के हितू हूजिये ॥
छकें छाक छूटे न छैला-छली।
न विज्ञान फूला न विद्या न फली ॥१६॥

सुधी साधु को मान खाना न दो। किसी दीन को एक दाना न दो ॥

पड़े न्याय के नाम की यों डली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥२३॥
बसे भैरवीचक्र में वीरता। विराजी रहै गर्ब–गम्भीरता ॥
वहाँ वीर-बानेत जाया करो। कड़े-कण्टकों को जलाया करो ॥
बने वर्ण–व्यापार की कज्जली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥२४॥
जगज्जाल से छूटजाना नहीं। बिना फन्द खाना कमाना नहीं ॥
न ऊँचे चढ़ो नीच होते रहो। बड़ों के बड़ों को बिगोते रहो ॥
कहो दूध की दाल चोखी गली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥२५॥
ठगो देशियों को ठगाया करो। बिना मेल मेले लगाया करो ॥
ढके ढोंग का ढाँच ढीला न हो। छबीली कहीं लोभ-लीला न हो ॥
ठगी दम्भ का पाय साँचा ढली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥२६॥
नई ज्योति की ओर जाना नहीं। पुराने दिये को बुझाना नहीं ॥
धनी सम्पदा को न हाँगा करो। भिखारी बने भीख माँगा करो ॥
भलों के लगी हाथ भिक्षा भली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥२७॥
अविद्वान, विद्वान, छोटे, बड़े। बड़े थे, बड़े हो, रहोगे बड़े ॥
सदा आप का बोलबाला रहै। कुदेवावली का उजाला रहै ॥
खिले भस्म, बिन्दा दिपै सन्दली।
र विज्ञान फूला न विद्या फली ॥२८॥
महा-तंत्र के मंत्र देते रहो। खरी दक्षिणा दान लेते रहो ॥
लगातार चेले बढ़ाते रहो। नई चेलियों को पढ़ाते रहो ॥

रहै श्याम के साथ श्यामा लली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥२६॥
घटी घाल को चंचला कीजिये । भलाई न भूलो भला कीजिये ॥
खरे खेल खेलो खिलाते रहो । सुधा सेवकों को पिलाते रहो ॥
बढ़ाती रहै मान गंगा-जली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥३०॥
महा-मूढ़ मोधू मिलापी रहैं । सँगाती सखा पोच पापी रहैं ॥
धनी दूध बूरा पिलाते रहैं । खरे माल खोटे खिलाते रहैं ॥
कहो ? कौन से दक्षिणा यों न ली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥३१॥
नहीं सींचना खेत संग्राम के । खड़े खेत जोता करो ग्राम के ॥
कड़े फूट के बीज बोया करो । सड़े मेल का खोज खोया करो ॥
जियें जाति-जोता न होते हली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥३२॥
छड़ीधार छैला छबीले बनो । रँगीले रसीले फबीले बनो ॥
न चूको भले भोग भोगी बनो । किसी बेड़नी के वियोगी बनो ।
घने यों गली मार घेरें गली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥३३॥
अमीरो धुआँ धार छोड़ा करो । पड़े खाट के बान तोड़ा करो ॥
मज़ेदार मूछें मरोड़ा करो । निठल्ले रहो काम थोड़ा करो ॥
चबाते रहो पान दौरे डली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥३४॥
रचो फाग होली मचाया करो । नई कंचनी को नचाया करो ॥
रँगीले बने रंग डाला करो । भरे भाव जी के निकाला करो ॥

रहो भंग घोंते, चबाते तली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥३५॥
न प्यारा लगे नाच गाना जिसे । कलंकी करे मांस खाना जिसे ॥
कसूमा, सुरा, भंग पीता नहीं । उसे जान लेना कि जीता नहीं ॥
कहो ? रे ललाहीज ! होजा लली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥३६॥
हँसे होलिका में न पाऊ बने । न दीपावली का कमाऊ बने ॥
न होली, दिवाली सुहाती जिसे । उसे छोड़ लूलू कहोगे किसे ॥
बना ढोर खाता न भूसा, खली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥३७॥
बड़ी चाह से ब्याह बूढ़े करें । नकीले कुलों की कुमारी बरें ॥
न बेटा सगी सास बाला कहै । न माजी लला साठसाला कहै ॥
कहै क्यों न बाबा बधू बावली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥३८॥
जहाँ बेटियाँ बेचना धर्म है । जहाँ भ्रूण-हत्या भला कर्म है ॥
बने रंडियाँ बालरंडा जहाँ । वहाँ पाप जीता रहैगा कहाँ ॥
अनाथा सुता की जमा मारली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥३९॥
लगा लाग दूकान खोला करो । कभी ठीक सौदा न तोला करो ॥
कहो ग्राहकों से कि धोखा नहीं । भला कौन सा माल चोखा नहीं ॥
बढ़ी, धूलि में यों न पूँजी रली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥४०॥
लगातार पूँजी बढ़ाते रहो । कमाते रहो ब्याज खाते रहो ॥
न कंगाल का पिण्ड छोड़ा करो । लुटे लीचड़ों का निचोड़ा करो ॥

कहो ? दाल यों छातियों पै दली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥४१॥
रुई, नाज देशी दिया कीजिये । बिदेशी खिलोने लिया कीजिये ॥
हवेली घरों को सजाया करो । पड़े मस्त बाजे बजाया करो ॥
चढ़ें मोटरों पै मझोली न ली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥४२॥
खरी खाँड़ देशी न लाया करो । बुरी बीट चीनी गलाया करो ॥
लुके लाट, शीरा मिलाते रहो । दुरंगी मिठाई खिलाते रहो ॥
कहो ? नाक यों धर्म की काटली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥४३॥
पराई जमा मारनी हो जहाँ । अजी ! काढ़ देना दिवाला वहाँ ॥
किसी का टका भी चुकाना नहीं । न थोथे उड़ाना थुकाना नहीं ॥
छुपी धूप की धाक छाया ढली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥४४॥
चितेरे, कलाकार, कारीगरो । उठो काम का नाम ऊंचा करो ॥
पड़े गुप्त क्यों विश्वकर्म्मा बनो । सुशर्म्मा बनो, वीर-वर्म्मा बनो ॥
कहो ? लो बला नीचता की टली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥४५॥
न भाषा पढ़ो, राज-भाषा पढ़ो । बढ़ो वीर ऊँचे पदों पै चढ़ो ॥
करो चाकरी घूँस खाया करो । मिले वेतनों को बचाया करो ॥
कहो ? न्याय क्या नीति भी नापली ।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥४६॥
गवाही कभी ठीक देना नहीं । कहीं सत्य से काम लेना नहीं ॥
भले मानसों को सताया करो । खरे खूसटों को बचाया करो ॥

दुराचार को मान लो मंगली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥४७॥

धता इंडिया की ध्वजों को कहो। सजे लंडनी फ़ैशनों से रहो॥
बरॉंडी पिओ मीट खाया करो। टके होटलों के चुकाया करो॥
बरो नारि गोरी मरे साँवली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥४८॥

बहू बेटियों को पढ़ाना नहीं। घरेलू घटी को बढ़ाना नहीं॥
पढ़ी नारि मैया डुबो जायगी। किसी मित्र की मैम होजायगी॥
बनेगी नहीं हंसनी कागली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥४९॥

सुनो तुकड़ो बात भद्दी नहीं। तुकों की करामात रद्दी नहीं॥
यहां भूख का क़ाफ़िया तंग है। अरे नागरो! नागरी दंग है॥
भुजंगी–कला–पिंगला काढ़ली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥५०॥

कहे पद्य भू बाँग थोड़े नहीं। गिनो गांठ बांधो मपोड़े नहीं॥
सुना दो छिली ईंट को गालियां। कथा हो चुकी पीट दो तालियां॥
सुसीमा सुधा–सिन्धु की लांघली।
न विज्ञान फूला न विद्या फली ॥५१॥

पछतावा ४०

(दोहा)

हा! खोटे दिन आगये, बीत गया शुभ-काल।
भारत–माता ने जने, अबुध, हीज, कंगाल ॥१॥

हायरे ! दुर्दैव ४१

[दादरा]

हाय ! कैसे कुदिन अब आय गये ॥टेक॥
बौरे बड़ों के बड़प्पन की बड़में, छोटों के सारे सहारे समाय गये ।
हाय ! कैसे कुदिन अब आय गये ॥
भागे भले-भोग भोजन को भटकें, भूखे, अभागे, भिखारी कहाय गये ॥
हाय ! कैसे कुदिन अब आय गये ॥
चेले चलाते न चेतन की चरचा, पूजें जड़ों को पुजारी पुजाय गये ।
हाय ! कैसे कुदिन अब आय गये ॥
शिक्षा सचाई की शंकर न समझें, अन्धे अनारी अविद्या बढ़ाय गये ॥
हाय ! कैसे कुदिन अब आय गये ॥१॥

दुःखार्तका निहोड़ा ४२

[दोहा]

जिस की चोटों से हुआ, जीवन चकनाचूर ।
हा ! मेरे उस दुःख को, करदे शंकर दूर ॥१॥

प्रभो ! पाहि ! पाहि !! ४३

(गीत)

करदे दूर दयालु महेश,
मुझ पै दारुण-दुःख पड़ा है ॥ टेक ॥

मन में ऊल रहा अविवेक, तन में उपजे रोग अनेक,
टिकती नहीं बचन में टेक, पकड़े पातक-पुञ्ज खड़ा है।
क० दू० द० म० मु० दा० दु० पड़ा है ॥
कुनबा रहै सदैव उदास, बहुधा करता है उपवास,
बिगड़ा ढङ्ग छदाम न पास, घर में घोर-दरिद्र अड़ा है ॥
क० दू० द० म० मु० दा० दु० पड़ा है ॥
श्रम की पूँछ न पकड़ें पूत, उद्यम करें न अल्लड़ ऊत,
भकड़ें तोड़ सुमति का सूत, छलिया छांटे, कुटिल बड़ाई।
क० दू० द० म० मु० दा० दु० पड़ा है ॥
मेरा निरख नरक में बास, निन्दक करते हैं उपहास,
शङ्कर! देख विषाद-बिलास, लघुता लिपटी, मान झड़ा है ॥
क० दू० द० म० मु० दा० दु० पड़ा है ॥

दीन विनय ४४

(दोहा)

देख दीनता दीन की, दीनदयालु-उदार।
दीनानाथ उतार दे, भव-सागर से पार ॥१॥

दीन पुकार ४५

[सगणात्मक-सवैया]

कर कोप जरा मन मार चुकी, बल-हीन सरोग-कलेवर है।
परिवार घना धन पास नहीं, भुजभग्न दरिद्र भरा घर है ॥
सब ठौर न आदर मान मिले, मिलता अपमान अनादर है।
मुझ दीन अकिञ्चन की सुधिले, सुख दे प्रभु तू यदि शङ्कर है ॥१॥

मन्दोच्च-गति ४६

(दोहा)

पानी गिरे समुद्र में, पर्वत पै चढ़ जाय।
पाय नीचता उच्चता, कौन नहीं चकराय ॥१॥

पुनरुद्धार की आशा ४७

(षट्पदी-छन्द)

भरती है भर पूर, लमक ऊपर लाती है।
वारि बहाय बहाय, अधोमुख मुड़ जाती है॥
जल घड़ियों की माल, रहट पै यों फिरती है।
इस प्रकार प्रत्येक, जाति उठती गिरती है॥
अब होगा भारत का भला, ब्रटिश-योग सुख-मूल है।
गुरु दयानन्द ज्ञानी मिले, शंकर-प्रभु अनुकूल है॥१॥

मन्दोद्भास का सार ४८

(दोहा)

जिस के द्वारा होगये, हम दरिद्र के दास।
उन दोषों का दृश्य है, समल-मन्द-उद्भास ॥१॥

इति

ओ३म्

अनुराग रत्न

विचित्रोद्भास

ब्रह्मोद्घोषण

अन्धन्तमः प्रविशन्ति ये सम्भूतिमुपासते ।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्याᳬरताः ॥
य०४० ॥९॥

प्रामादिक-मदोन्मत्त

* (शार्दूलविक्रीडित-वृत्त)

आदित्यस्य गतागतै रहरहः, संक्षीयते जीवितं ।
व्यापारैर्बहु कार्यभारगुरुभिः, कालो न विज्ञायते ॥
दृष्ट्वा जन्म जरा-विपत्ति मरणं, त्रासश्च नोत्पद्यते ।
पीत्वा मोहमयीं प्रमादमदिरा, मुन्मत्तभूतं जगत् ॥ १ ॥

(पञ्चचामर-वृत्त)

महेश के महत्व का, विवेक बार बार हो ।
अखण्ड एक तत्वका, अनेकधा विचार हो ॥
बिगाड़ से समाज के, प्रबन्ध का सुधार हो ।
प्रवीण-पञ्चराज के, प्रपञ्च का प्रचार हो ॥१॥

पञ्च-प्रलाप १

(सोरठा)

जिन का पुण्य प्रताप, कोई कह सकता नहीं ।
महिमा अपनी आप, समझाते वे सब कहीं ॥१॥

* श्री राजर्षि-महाकवि-भर्तृहरि प्रणीत ।

पंचानन्द ३

(दोहा)

मनसा, वाचा, कर्मणा, महिमा से भरपूर ।
मेरे मान, महत्व से, गौरव रहै न दूर ॥१॥

मेरा महत्व १

(रौलाछन्द)

मङ्गल—मूल—महेश, मुक्ति—दाता—शङ्कर है ।
शङ्कर का उपदेश, महाविद्या का घर है ॥
शङ्कर—जगदाधार, तुझे मैं जान चुका हूँ ।
उन्नति का अवतार, वेद को मान चुका हूँ ॥१॥

मेरा विशद-विचार, भारती का मन्दिर है ।
जिस में बन्ध-विकार, कल्पना सा अस्थिर है ॥
प्रतिभा का परिवार, उसी में खेल रहा है ।
अवनति को संसार, कूप में ठेल रहा है ॥२॥

रहै निरन्तर साथ, धर्म दश लक्षण धारी ।
पकड़ रहा है हाथ, सुकर्मोदय-हितकारी ॥
प्रति दिन पांचो याग, यथाविधि करताहूं मैं ।
सकल कामना त्याग, स्वतंत्र विचरताहूं मैं ॥३॥

सार हीन हठ-वाद, छोड़ आचरण सुधारे ।
छल, पाखण्ड, प्रमाद, विरोध-विलास बिसारे ॥
मन में पाप-कलाप, कुमत का बास नहीं है ।
मदन, मोह, सन्ताप, कुलक्षण पास नहीं है ॥४॥

मुझ में ज्ञान, विराग, बुद्ध से भी बढ़ कर है।
अविनाशी अनुराग, असीम अहिंसा पर है॥
निरख न्याय की रीति, मुझे सब राम कहेंगे।
परख अनूठी नीति, सुधी घनश्याम कहेंगे॥५॥

रोग हीन बलवान, मनोहर मेरा तन है।
निश्चल प्रेम--प्रधान, सत्य-सम्पादक मन है॥
निर्मल-कर्म, विचार, वचन में दोष कहाँ है।
मुझ सा धन्य, उदार, अन्य मृदु-घोष कहाँ है॥६॥

वीत-राग, बिन रोष, एक मुनि-नायक पाया।
निगुरा-पन का दोष, उसे गुरु मान मिटाया॥
यद्यपि सिद्ध--स्वतंत्र, जगद्‌गुरु कहलाता हूँ।
तो भी गुरु-मुख-मंत्र, मान मन बहलाता हूँ॥७॥

दुःख-रूप सब अङ्ग, अविद्या के पहँचाने।
सुख--सम्पन्न--प्रसङ्ग, अर्थ अपरा के जाने॥
दोनों पर अधिकार, पराविद्या करती है।
अखिलानन्द--अपार, एकता में भरती है॥८॥

जिस की उलटी चाल, न सीधा सु मग दिखावे।
जिसका कोप कराल, न मेल मिलाप सिखावे॥
जो खल-दल को घोर, नरक में ठेल रही है।
वह माया चहुँ ओर, खेल खुल खेल रही है॥९॥

जो सब के गुण, कर्म, स्वभाव समस्त बतावे।
जो ध्रुव-धर्म अधर्म, शुभाशुभ को समझावे॥

जिस में जगदाकार, भद्र-मुख-भाव भरा है।
वही विविध-व्यापार, परक विद्या अपरा है ॥१०॥

जीव जिसे अपनाय, फूल सा खिल जाता है।
योग समाधि लगाय, ब्रह्म से मिल जाता है ॥
जिस में एक अनेक, भावना से रहता है।
उस को सत्य-विवेक, परा-विद्या कहता है ॥११॥

जिस में जड़ चैतन्य, सर्व-संघात समावे।
जिस अनन्य में अन्य, बस्तु का बोध न पावे ॥
जिस जी में रस उक्त, योग का भर जावेगा।
वह बुध जीवन्मुक्त, मृत्यु से तर जावेगा ॥१२॥

बालक-पन में रांड़, अविद्या की जड़ काटी।
तरुण हुआ तो खाँड़, खीर अपरा की चाटी ॥
अब तो उत्तम लेख, परा के बाँच रहा हूँ।
बुढ़वा मङ्गल देख, जरा को जाँच रहा हूँ ॥१३॥

गाणपत्य-मत मान, रहे थे मेरे घर के।
मैं भी गुण गण गान, करे था लम्बोदर के ॥
शिशुता में वह बाल, बिलास न छोड़ा मैंने।
उमगा यौवन-काल, दम्भ-घट फोड़ा मैंने ॥१४॥

पढ़ ताथा दिन रात, महाश्रम का फल पाया।
निखिल तंत्र निष्णात, राजपण्डित कहलाया ॥
लालच का बल पाय, लण्ठ गढ़ तोड़ लिया था।
केवल गाल बजाय, घना धन जोड़ लिया था ॥१५॥

रहे प्रतारक सङ्ग, कपट की बेलि बढ़ाई।
मन भाये रस रङ्ग, मदन की रही चढ़ाई॥
भोजन,पान, विहार, यथा रुचि करताथा मैं।
विधि,निषेध का भार, न सिर पै धरताथा मैं॥१६

बाल-विवाह–विशाल, जाल रच पाप कमाया।
ब्रह्मचर्य--व्रत—काल, वृथा विपरीत गयाया॥
अबला ने चुपचाप, उठाय पछाड़ा मुझ को।
बेटी जन कर बाप, बनाय बिगाड़ा मुझ को॥१७॥

प्यारे गुरु, लघु लोग, मरे घरबार बिसारे।
करनी के फल भोग, भोग सुरधाम सिधारे॥
बनिता ने जब हाथ, हटा कर छोड़ा मुझ को।
तब सुधार के साथ, सुमतिने जोड़ा मुझ को॥१८॥

पहले बालक चार, मृत्यु के मुख में डाले।
पिछले कौल-कुमार, कल्प-पादप से पाले॥
जिन को धन-भण्डार, युक्त घर पाया मेरा।
अब शिव ने संसार, कुटुम्ब बनाया मेरा॥१६॥

जिस जीवन की चाल, बुरा करती थी मेरा।
बीत गया वह काल, मिटा अन्धेर–अँधेरा॥
पिछले कर्म- कलाप, बताना ठीक नहीं है।
अपने मन को आप, सताना ठीक नहीं है॥२०॥

हिमगिरि-ज्ञानागार, धवल–मेधा–ध्रुवनन्दा।
उस में चूबक मार, मार मन रहा न गन्दा॥

पातक-पुञ्ज पजार, पुण्य भर-पूर किया है।
ज्ञान प्रकाश पसार, मोह-तम दूर किया है ॥२१॥

जान लिया हठ-योग, अखण्ड-समाधि लगाना।
कर्म-योग फल भोग, अमङ्गल-भूत भगाना ॥
क्या मुझ सा व्रत-सिद्ध, सुधारक और न होगा?।
होगा पर सुप्रसिद्ध, सर्व-शिरमौर न होगा ॥२२॥

क्या करते प्रतिवाद, बचन सुन मेरे तीखे।
गोतम, कृष्ण, कणाद, पतञ्जलि, व्यास सरीखे॥
युक्ति हीन नर ग्रन्थ, न जीमें भर सकते हैं।
तर्क-शत्रु मत, पन्थ, भला क्या कर सकते हैं ॥२३॥

बन कर मेरा जोड़, न ऊत अजान अड़ेगा।
पण्डित भी भय छोड़, न टेक टिकाय लड़ेगा ॥
भिड़ा न भारत धर्म, मुखर मण्डल में कोई।
दिखला सका सुकर्म, न वैदिक दल में कोई ॥२४॥

मैंने असुर, अजान, प्रमादी, पिशुन पछाड़े।
हार गये अभिमान, भरे अवधूत-अखाड़े ॥
जिस की चपला-चाल, देश को दल सकती है।
क्या उस दल की दाल, यहाँ भी गल सकती है? ॥२५॥

हेकड़ होड़ दबाय, उलझने को आते हैं।
पर वे मुझे नवाय, न ऊँचा पद पाते हैं ॥

जिस का घोर घमण्ड, घरेलू घटजाता है।
वह प्रचण्ड-उद्दण्ड, हठीला हटजाता है ॥२६॥

ठग मेरे विपरीत, बुरी बातें कहते हैं।
घरही में रणजीत, बने बैठे रहते हैं॥
मैं कलि-काल-विरुद्ध, प्रतापी आप हुआ हूँ।
पाकर जीवन-शुद्ध, निरा निष्पाप हुआ हूं॥२७॥

जो जड़ मति का कोष, न पूजेगा पग मेरे।
उस अजान के दोष, दिखा दूँगा बहुतेरे॥
जो मुझ को गुरु मान, प्रेम के साथ रहैगा।
[illegible] पर मेरे मान, दान का हाथ रहैगा॥२८॥

मैं असीम-अभिमान, महा-महिमा के बल से।
डरता नहीं निदान, किसी प्रतियोगी-दल से॥
निगमागम का मर्म, विचार लिया करता हूँ।
तदनुसार सद्धर्म, प्रचार किया करता हूँ॥२९॥

तन में रही न व्याधि, न मन में आधि रही है।
रही न अन्य उपाधि, अनन्य-समाधि रही है॥
अनघ शिष्य को सर्व, सुधार सिखा सकता हूँ।
अपना गौरव-गर्व, अदम्य दिखा सकता हूँ॥३०

मुझ को साधु-समाज, शुद्ध-जीवन जानेगा।
सर्वोपरि-मुनि-राज, सिद्ध-मण्डल मानेगा॥
अपना नाम पवित्र, प्रसिद्ध किया है मैंने।
शुभ चरित्र का चित्र, दिखाय दिया है मैंने॥३१॥

यद्यपि लालच दूर, कर चुका हूँ मैं मन से।
तो भी मठ भरपूर, भरा रहता है धन से॥

छोड़ दिये सुख-भोग, विषय-रस रूखा हूँ मैं ।
दान करें सब लोग, सुयश-मधु भूखा हूँ मैं ॥३२॥

वेद और [illegible]वेद, पढ़ा सकता हूँ पूरे ।
अङ्ग विधायक भे[illegible], रहेंगे नहीं अधूरे ॥
तर्क-प्रवाह--तरङ्ग, विचित्र दिखादूँ सारे ।
पौराणिक-रस--रङ्ग, प्रसङ्ग सिखाऊँ [illegible]

ग्रन्थ बिना अनुवाद,किसी भाषा का रख[illegible]
उस के रस का स्वाद, खड़ी बोली में चख[illegible]
जो अनुचर-अल्पज्ञ, न ज्यों का त्यों समझेगा ।
वह मुझ को सर्वज्ञ, कहो तो ?क्यों समझेगा ॥३४॥

यदि मैं व्यर्थ न जान, काम कविता से लेता ।
तो-तुकड़-कुल मान, दान क्या मुझे न देता? ॥
लेखक लेख निहार, लेखनी तोड़ चुके हैं ।
सम्पादक हिय हार, हेकड़ी छोड़ चुके हैं ॥३५॥

शिल्प रसायन सार, कहो जिसको सिखला दूँ ।
अभि नव-आविष्कार, अनोखे कर दिखला दूँ ॥
भूमि-यान,जल-यान, विमान बना सकता हूँ ।
यंत्र सजीव समान, अजीव जना सकता हूँ ॥३६॥

गोल-भूमि पर डोल,डोल सब देश निहारे ।
खोल गगन की पोल, बेध कर परखे तारे ॥
लोक मिले चहुँ ओर, कहीं अवलम्ब न पाया ।
विधि ने जिस का छोर,छुआ वह लम्ब न पाया ॥३७॥

दे दे कर उपदेश, पुजा देशी मण्डल में।
किया न चञ्चुप्रवेश, राज विद्रोही दल में॥
अब सरिता के तीर, कुटी में बास करूँगा।
त्याग अनित्य शरीर, काल ग्रास करूँगा॥३८॥

मेरा अनुचर-चक्र अटाली चाल चलेगा।
रौंद रौंद बक्र, कुचालों को कुचलेगा॥
की दूर, दुर्दशा करदेवेगा।
में भरपूर, भलाई भरदेवेगा॥३९॥

सुनकर मेरी आज, अनूठी राम कहानी।
धन्य धन्य मुनि राज, कहेंगे आदर दानी॥
पण्डित परमोदार, प्रवीण प्रणाम करेंगे।
लम्पट लण्ठ लबार, वृथा बदनाम करेंगे॥४०॥

मन मोदक ५

(दोहा)

दूर करेंगे आलसी, मन मोदक से भूख।
फूल फलेंगे चित्र के, सुन्दर नीरस रूख॥ १॥

मेरा मनोराज्य ६

(सपुच्छ चतुष्पदी छन्द)

मङ्गल-मूल सच्चिदानन्द। हे शङ्कर! स्वामी-सुख-कन्द॥
देव रहो मेरे अनुकूल। दूर करो सारे भ्रम-शूल॥
कर दानी, मनमानी॥ १॥